दादी हृदयपुष्पा

आपको प्यार से सभी टिक्कन दादी कहते थे। आपका अटूट निश्चय, बाबा से सच्चे दिल का प्यार और दृढ़ विश्वास बेहद सेवाओं की नींव बना। बैंगलोर में रहकर आपने पूरे कर्नाटक की सेवाओं का कार्यभार संभाला। बाबा के हजारों बच्चों की पालना करते हुए आप बहुत लाइट रहती थी। आपके अंदर उमंग-उत्साह भरपूर था। आपने बैंगलोर में एक रिट्रीट सेन्टर बनाया और वहाँ भगीरथ के मुख से कैसे ज्ञान गंगायें निकलकर सारी सृष्टि को पावन बना रही हैं, यह दृश्य मॉडल के रूप में प्रस्तुत किया। एक बड़े शिवलिंग में आध्यात्मिक संग्रहालय बनाया जो आज बैंगलोर के दर्शनीय स्थलों में गिना जाता है। आपके द्वारा निकाले हुए अनेक रत्न बाबा के यज्ञ की बेहद सेवाओं में समर्पित हैं। आप दादी चन्द्रमणि की लौकिक में बड़ी बहन थी। आप 15 जुलाई 1996 में भौतिक देह का त्याग कर अव्यक्त वतनवासी बनी।

दादी हृदयपुष्पा जी का जन्म सिंध (हैदराबाद) में हुआ। इनके पिता रतनचन्द सुरतानी, लंका देश की राजधानी कोलम्बो में कपड़े तथा बिस्तरों की दुकान के मालिक थे। माताजी का नाम सीता था। जिनके नौ बच्चे थे। पहली संतान थी बच्ची, जिसका नाम था बड़ी लक्ष्मी। दूसरी थी बम (पार्वती), तीसरी थी छोटी लक्ष्मी, चौथी थी किक्की, पाँचवी थी टिक्कन (हृदयपुष्पा जी), छठवाँ था तीर्थ, सातवीं थी मोतिल (चन्द्रमणि जी), आठवाँ था परसु (जो नवनन्द की गोद में गया था) और नौवीं थी पारी (पार्वती)। इनमें लक्ष्मी, टिक्कन, मोतिल और पारी ईश्वरीय यज्ञ में समर्पित हुई थीं। दादी हृदयपुष्पा बचपन में, ईश्वर के ध्यान में जहाँ बैठती थी, वहाँ बैठ ही जाती थी, उठती ही नहीं थी इसलिए टि क्कन नाम पड़ गया।

दादी हृदयपुष्पा जी के शब्दों में, उनके ईश्वरीय ज्ञान में आने की कहानी इस प्रकार है

आवाज आई, 'तुम पवित्र रहोगी'

मैं जब 18 वर्ष की हुई, तब मेरी शादी निश्चित हो गई। शादी तय होने पर मुझे बिल्कुल

अच्छा नहीं लगा, बहुत दुखी भी हुई। दूसरों की शादी की बात सुनकर भी मैं दुखी हो जाती थी पर पता नहीं था कि ऐसा क्यों होता है। एक बार मेरे कानों में आवाज आई, 'तुम पवित्र रहोगी', सुनकर प्रश्न उठा, शादी हुई तो पवित्र कैसे रहूँगी? निश्चित समय पर शादी हुई लेकिन पति, जब से शादी हुई तब से ही बीमार था। छह मास तक एक नर्स की भाँति मैंने देखभाल की, फिर विधवा हो गई। मुझे यह सोचकर भारी दुख हुआ कि कल तक तो मैं 'कन्या' थी पर आज 'विधवा' बनकर सबकी नफरत भरी नजरों का सामना करना पड़ेगा। मुझे कई बार यह शब्द भी सुनाई देता था कि 'कृष्ण मिलेगा', 'कृष्ण मिलेगा' लेकिन अभी तक कृष्ण क्यों नही मिला, यह सोचकर भी दुख होता था।

बाबा ने पूछा, क्या बिन्दी को पति होता है?

एक दिन मैं जब गीता पढ़ने बैठी तो उस ग्रंथ से एक ज्योतिबिन्दु, प्रकाश फैलाते हुए ऊपर आ रहा था। उस प्रकाश में मुरलीधर श्रीकृष्ण भी दिखाई पड़ा। उसे देखकर इतनी खुशी हुई कि अपने आप को ही भूल गई। तीन दिन बाद मेरी एक मौसी घर में आई और कहने लगी कि तुम दादा लेखराज के पास जाओ, श्री कृष्ण के दर्शन होंगे। वहाँ गई तो एक साधारण व्यक्ति अर्थात् दादा लेखराज को देखा, सोचने लगी कि कहाँ हैं श्री कृष्ण। दादा ने पूछा, बेटी तुम कौन हो? मैंने कहा, मैं एक दुखी इंसान हूँ। बाबा ने पूछा, शरीर में बात करने वाला कौन है? फिर कहा, मनुष्य को जीते-जी क्यों नहीं जलाते, मरने के बाद क्यों जलाते हैं? मरने के बाद उसमें से क्या चला जाता है? अभी तुमको श्मशान में ले जाकर जलायेंगे क्या? फिर बाबा ने अपने हाथ से एक मनुष्य का चित्र बनाया और उसकी भ्रकुटि में आत्मा अंकित की। फिर मुझे समझाया कि देखो, यह शरीर तो पाँच तत्वों का पुतला है और विनाशी है, इसके अंदर जो आत्मा है वह चेतन है और अनादि-अविनाशी है। बच्ची, ये दो चीजें अलग-अलग हैं। शरीर जल जाता है, आत्मा नहीं जलती। आत्मा एक शरीर से निकलकर दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाती है, अब बताओ, आप दोनों में से कौन हो? आप यह पाँच तत्व का शरीर हो जो कि जल जाता है या इसमें जो आत्मा है, आप वही हो। मैंने कहा, बाबा, इस स्पष्टीकरण के अनुसार तो मैं एक आत्मा हूँ, ज्योतिबिन्दु स्वरूप हूँ तो बाबा ने पूछा, क्या बिन्दी को पति होता है? तुम तो ज्योतिस्वरूप आत्मा हो, शांतस्वरूप आत्मा हो फिर अशांत कैसे हुई? अशान्ति तो प्रकृति के धर्म को अपनाने से होती है, अब बताओ, यह किसने कहा कि मैं एक दुखी इंसान हूँ। आप दुखी इंसान हो या शांत स्वरूप आत्मा हो? यह सुनते ही मेरे रोम-रोम में बिजली की तरह प्रकाश दौड़ गया और मैं देह से न्यारी हो गई। इस स्थिति में निज आत्मा का अनुभव करने लगी। आत्मा में दुख-अशांति का जो काला-सा बादल था, वह इस रोशनी से मिटने लगा। आत्मा साफ होने लगी और निज स्वरूप में टिककर खुशी में हँसने लगी। जब इस अवस्था से कुछ नीचे उतरी तब बाबा ने मुझे बुलाया और पूछा, अब बताओ कि आप कौन हो? मैंने कहा, मैं एक आत्मा हूँ। बाबा ने फिर पूछा, अब आप दुखी हो या सुखी? मैंने कहा, मैं एक

शान्त स्वरूप तथा सुखस्वरूप आत्मा हूँ, मेरे जैसा सुखी कोई नहीं। बाबा ने फिर पूछा, संसार दुख रूप है या सुख रूप? मैंने कहा, सुख रूप है। तब बाबा ने कहा, अच्छा, आज का पाठ पक्का करना और फिर कल मैं दूसरा पाठ पढ़ाऊँगा।

माता ने किया विष्णु चतुर्भुज का साक्षात्कार

मैं जब बाबा के पास आई थी तो मन ही मन रोती हुई आई थी और अब हँसते हुए घर लौट रही थी। मेरी अवस्था आत्म-स्थित और हर्षमय थी। मुझे एक अलौकिक नशा-सा था। मेरी माताजी, मेरे भाई की अचानक मृत्यु के कारण और मेरे विधवा होने जाने के कारण बहुत दुखी रहती थी। मैंने घर में जाकर अपनी दुखी माता को भी यह ज्ञान-वार्तालाप सुनाया। मैंने माता जी से कहा, आप रोती क्यों हैं? प्रकृति के बने शरीर तो नाशवान हैं ही, उनके लिए क्या रोना? आत्मा तो अजर-अमर-अविनाशी है, आप तो शान्त स्वरूप हैं..। माताजी को ये बातें बहुत ही अच्छी लगी। उसने मुझसे कहा कि तुम प्रतिदिन जाकर ज्ञान सुन आया करो और मुझे भी सुनाया करो। मैंने एक दिन बाबा को स्वयं ही अपनी लौकिक माता के दुख का समाचार सुनाया। बाबा ने कहा, अच्छा, मैं उनके पास अभी चलता हूँ। बस, उसी घड़ी दयालु बाबा मेरे साथ चले मेरी दुखी माता को शान्ति देने। हम घर पहुँचे। अहा! मेरी लौकिक माता बाबा को देखते ही एक सेकण्ड में देहभान को भूल गई और विष्णु चतुर्भुज का दिव्य साक्षात्कार करने लगी। अब उनके मुख पर मानसिक शान्ति की रेखायें उभर आई और वे हाथ जोड़े, ध्यान निमग्न बैठी रही। ध्यानावस्था से नीचे उतरने पर बाबा ने उन्हें भी ज्ञानामृत पिलाकर शान्त किया।

हमारे सारे दुख दूर हो गए

जब मैं और मेरी माँ सत्संग में जाने लगे तो हमारे सारे दुख दूर हो गये। मुझे देखकर मेरे पिता जी को बहुत खुशी हुई क्योंकि हर माँ-बाप यही चाहते हैं कि उनके बच्चे खुश रहें। मैंने पिताजी से कहा, आप भी चलो दादा के पास। उन्होंने कहा, तुम लोगों को देखकर ही मुझे खुशी हो रही है। मुझे ज्ञान मिला, फिर वहाँ क्या जाना है! कुछ समय बाद एक दिन बाबा ने कहा कि आप सभी अपने लौकिक माता-पिता से या सास-ससुर से चिट्ठी ले आओ जिसमें लिखा हो कि हम अपनी बच्ची या स्त्री को खुशी से छुट्टी देते हैं कि वह ओम् मण्डली में ओम् राधे के पास ज्ञानामृत पीने और पिलाने जावे, अतः मैंने भी अपने लौकिक पिता से इसके लिए आवेदन किया। वह माँसाहारी थे, शराब खूब पीते थे तथा उनके संस्कारों का धर्म की ओर झुकाव नहीं था। वे यह सुनकर बहुत ही गर्म हो गए और बोले कि मैं ऐसा नहीं लिखकर दूँगा। मैं सोच में पड़ गई कि अब क्या होगा? बाबा चिट्ठी के बिना सत्संग में प्रवेश नहीं देंगे और पिता जी लिखकर नहीं देते। मैं तो ज्ञानामृत के बिना वैसे ही तड़प कर मर जाऊँगी जैसे मछली जल के बिना तड़प कर मर जाती है। मैं मन ही मन प्रभु को याद करके कहती थी कि

प्रभु, आप ही मेरी सहायता करो। आखिर एक दिन मैंने लौकिक पिता को कहा कि आपको बाबा ने याद किया है।

पिताजी चले बाबा से मिलने

यह बात सुनते ही हमारे पिता का मन मोम की तरह पिघल गया। वे कहने लगे, दादा इतने बड़े व्यक्ति हैं, यदि वे मुझे बुलायें तो ऐसा नहीं हो सकता कि मैं न जाऊँ। मैं आज ही आपके साथ चलता हूँ। मेरे पिता जी एक बहुत बड़े कुल के थे और मेरे ससुराल का भी हैदराबाद में अच्छा ही मान था परंतु दादा की ओर से मिलने का संदेश सुनकर, उन्हें सम्मान देते हुए मेरे लौकिक पिता मेरे साथ चले। मैंने बाबा को जाकर समाचार दिया कि लौकिक पिता आये हैं। साथ ही यह बताया कि वे कुछ दिन पहले मुझे पत्र लिख देने से बिल्कुल इंकार करते थे। बाबा उनसे मिले।

बाबा ने उनसे कहा, क्या आप जानते हैं कि आपकी यह पुत्री यहाँ क्यों आती है? आज इसके जीवन में जो शान्ति है, वह इसे कैसे मिली? बाबा ने उन्हें थोड़ा ज्ञान दिया और फिर 'ओम् राधे' को कहा कि वह उन्हें और अधिक विस्तार से ज्ञान स्पष्ट करे।

पिताजी शाकाहारी बन गये

ओम् राधे ने उन्हें समझाया था कि आप चेतन आत्मा हैं। यह शरीर आपका एक मन्दिर है। क्या मन्दिर में कभी माँस का भोग लगाया जाता है? कभी मूर्तियों या जड़ चित्रों को शराब की भेंट करते हो? इस प्रकार ओम् राधे जी ने उन्हें ऐसे प्रभावशाली तरीके से समझाया कि उनका जीवन ही पलट दिया। उन्हें अपनी अंतरात्मा में ऐसा महसूस हुआ कि उन्होंने माँस, शराब आदि का सेवन करके तथा क्रोध और अशुद्ध व्यवहार आदि से बहुत पाप किये हैं। साथ-साथ उन्हें इस बात का मनन करते हुए एक अनोखा आत्मिक नशा भी चढ़ा कि मैं शरीर रूपी मन्दिर में रहने वाला अपने आदि-स्वरूप में एक चेतन देवता हूँ। मन में दोनों लहरें लेकर वे घर आये और उन्होंने शराब की बोतलें उठाकर बाहर सड़क पर फेंकनी शुरू कर दी। वे विलायती शराब की बहुत कीमती बोतलें थीं। उन्हें बोतलें फेंकता देखकर उनका लौकिक भाई बोला, दादा, आप इन्हें सड़क पर क्यों फेंकते हो? हमको दे दो। मेरे पिताजी ने कहा, जो पाप का काम हमने छोड़ दिया, वह आपसे भी नहीं कराना। उस दिन से लेकर पिताजी शाकाहारी बन गये और घर में अशुद्ध भोजन का निषेध हो गया।

सारा परिवार समर्पित हो गया

जब मैंने देखा कि हमारे लौकिक पिता के मन में अब ज्ञान का रंग लगा है तो मैंने फिर वह पत्र लिख देने के लिए कहा। मेरी लौकिक बहन जी तथा माता जी भी पत्र लेना चाहती

थी। हमें आश्चर्य भी हुआ और बहुत खुशी भी हुई, जो पिता जी ने कहा कि मैं आप सबको अभी ज्ञान-अमृत पीने-पिलाने की छुट्टी देता हूँ और साथ में यह भी पत्र में लिख देता हूँ कि मैं स्वयं भी ज्ञानामृत पिया करूँगा। उन्होंने हमें सहर्ष वह पत्र लिख दिया और बाद में हमारा सारा कुटुम्ब ही इस ईश्वरीय ज्ञान में तन, मन, धन सहित समर्पित हो गया।

बाबा मुझे कहते थे, बच्ची, बाबा ने आपको अच्छी तरह पहचाना है, ऐसे और कोई पहचान नहीं सकता। बच्ची, तुम मेरे दिल का अनमोल फूल हो, इसलिए मैंने तुम्हें 'दिल' नाम दिया है। ऐसे कहते-कहते बाबा ने मुझे स्वमान में स्थित किया था।

आदत, अदालत में डाल देगी

प्यारे बाबा ने मझे सुस्ती पर बड़ी युक्ति से जीत पहनाई। मैं रोज अमृतवेले उठती थी परंतु नींद के झुटके खाती रहती थी। मैंने बाबा से कहा, बाबा, आप तो कहते हो, यह सहज राजयोग है परंतु इतनी कठिनाई क्यों होती है? नींद के झुटके खाने से तो अच्छा है, मैं जाकर सो जाऊँ।' बाबा ने बड़े रहम भाव से कहा, बच्चो चाहे झुटका खाओ या घुटका, पर उठकर जरूर बैठो। धीरे-धीरे उठने की आदत पड़ जायेगी फिर माया सामना नहीं करेगी। अगर सो जाओगी तो वही आदत पड़ जाने से फिर माया जीत पाने नहीं देगी और बड़ी आदत, अदालत में डाल देगी। ऐसे कहकर बाबा ने तीर लगाया।

मैं जागती ज्योति बन गई

एक बार मैं बड़े हॉल में सो रही थी परंतु प्रात नींद नहीं खुली। मैं सपने में देख रही हूँ कि बाबा से लाइट की किरणें बड़े जोर से मेरी तरफ आ रही हैं, मैं इसी में मग्न थी। अचानक आँखें खुली तो देखा, बाबा और उनके साथ अन्य दो-तीन बहनें मेरे सामने खड़े, मुझे दृष्टिदे रहे थे। मैं शर्मसार हुई और उठकर चली गई। परंतु बाबा की उस कल्याणकारी दृष्टि ने मेरी आँखों से व्यर्थ नींद चुरा ली और मैं जागती ज्योति बन गई। बाद में पहरे की ड्यूटी के समय भी मैं निद्राजीत बनने में सफल रही। इस प्रकार बाबा ने, मुख से कुछ भी कहे बिना ही मुझे निद्राजीत बना दिया। ऐसे बाप का कितना न शुक्रिया अदा करूँ! इसी निद्राजीत की स्थिति को आगे बढ़ाते हुए, एक रात मैं सारी रात्रि योग करने का संकल्प लेकर बैठ गई। मुझे समय का अहसास नहीं था। रात्रि दो बजे प्यारे बाबा की ब्राह्मणी आई। बाबा ने उसे टॉर्च देकर भेजा था कि जाओ, देखो ऐसी कौन-सी आत्मा है जो मेरी भी नींद को फिटा रही है। वह ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मेरे पास पहुँची, फिर मुझे ले गई बाबा के पास। बाबा बोले, बच्ची, क्या बात है, जो मेरी नींद फिट ा रही हो, बोलो, बाबा से क्या चाहिए, ऐसे कहते दृष्टि देने लगे। वह दृष्टि मुझे इतना निहाल करती रही जो उस प्यार के सागर में मैं समा गई। वे सुखद मिलन की घड़ियाँ, जिंदगी में कभी भूल नहीं सकती हूँ। जो पाना था सो सब कुछ पा लिया, ऐसे भरपूर महसूस करती हूँ।

बाबा की युक्ति

यज्ञ में एक छोटी कन्या बाबा की याद में नहीं रह पाती थी। उसको बाबा ने एक सेवा दी थी। वो कौन-सी सेवा थी, सुनकर आपको भी आश्चर्य लगेगा। वो सेवा थी हर पाँच मिनट में बाबा को आकर पूछना, बाबा, आपको शिव बाबा याद है? वो पूछने के लिए आई। बाबा ने धन्यवाद दिया। मेरे सामने ही तीन-चार बार आकर पूछकर गई तो मुझे वंडर लगा। मैंने पूछा, बाबा, यह छोटी कन्या आपको ऐसे क्यों पूछती है? बाबा ने हँसते हुए कहा, बच्ची, यह बच्ची शिव बाबा को याद नहीं करती, इसी बहाने उसको याद आ जायेगी। इसलिए बाबा ने यह युक्ति रची है। प्यारे बाबा ने निरहंकारी हो, बच्चों के कल्याण के लिए ऐसी युक्तियाँ भी रची।

अपकारियों पर उपकार

प्यारे बाबा अपकारियों पर भी कैसे उपकार करते थे, यह सब हमने बाबा के चरित्रों से सीखा। एक यज्ञ का पला हुआ भाई, भागन्ती होकर, यज्ञ की ग्लानि करता था। उसको मेरे द्वारा बाबा ने एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था, आ लौटके आ जा मेरे मीत, बच्चे, आ जाओ फिर से..। मैंने जब उसे पत्र दिया तो उसने पूछा, यदि मैं जाऊँ, तो क्या बाबा मुझे उसी दृष्टि से देखेंगे, जिस दृष्टि से पहले देखते थे? मैंने कहा, हाँ, क्यों नहीं, जरा पत्र देखो तो। उसने दुबारा पत्र पढ़ा और एकदम घायल होकर बाबा से मिलने चला आया। सामने पांडव भवन में बाबा खड़े थे। बाबा ने देखते ही स्नेह की दृष्टि देते हुए, उसे एकदम गले से लगा लिया। मैं मन ही मन मुग्ध होकर सोचने लगी, वाह! बाबा वाह! आप तो कितने उपकारी हो! जिसने इतनी ग्लानि की, गाली दी, उसे भी अपनाया। वह भाई भी कहने लगा कि बाबा सचमुच भगवान है जिसने मुझ जैसे पापी, विकारी को फिर से अपना लिया..। यह था अपकारी पर उपकार करने का दृश्य।

यज्ञ के घोड़े

कराची में 14 वर्ष तपस्या करने के बाद हम माउंट आबू में आ गये। यहाँ हम 400 भाई-बहनें संगठन में रहते थे। मन-वचन-कर्म में रूहानियत थी। परमात्मा की याद के सिवाय किसी व्यक्ति, वैभव, पदार्थ की याद नहीं आती थी। एक की ही याद में मग्न थे। देवताओं जैसा सच्चा जीवन था। अपने को बहुत हल्के तथा प्रकाश की काया में अनुभव करते थे। निरंतर शांति की अनुभूति में डूबा हुआ त्यागी, तपस्वी और सेवाधारी जैसा जीवन था। बाबा ने इस यज्ञ को राजस्व अश्वमेध अविनाशी रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ नाम दिया। जैसे प्राचीन काल में अश्वमेध यज्ञ रचते थे तो यज्ञ के एक सफेद घोड़े को चारों दिशाओं में जाने के लिए खुला छोड़ देते थे। जो कोई उस घोड़े को बाँधता था, उसे युद्ध करना पड़ता था। यहाँ भी बाबा ने रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ के सफेद वस्त्रधारी निमित्त बहनों-भाइयों को भगवान का संदेश देने हेतु, मानो घोड़े की तरह, देश-विदेश में भेजने की योजना बनाई ताकि ज्ञान-यज्ञ की ज्वाला चारों ओर फैल सके।

एक दिन मैं पहाड़ी पर बैठी बाबा की याद में मगन थी। इसी बीच मुझे अशरीरी वाणी सुनाई पड़ी कि जाओ, सेवा के लिए निकलो। योग से उठकर यहाँ-वहाँ देखा तो कोई दिखाई नहीं पड़ा। दूसरे दिन भी जब मैं योग में बैठी थी तो वही आवाज सुनाई पड़ी कि जाओ, सेवा पर जाओ। फिर एक दिन बाबा ने मुझे कमरे में बुलाया और कहा, बच्ची, जाओ, सेवा के लिए निकलो। दक्षिण भारत में मेरे लाखों भक्त हैं, उनको मेरा परिचय दो। वहाँ मेरे भोले बच्चे हैं, जाकर उनकी सेवा करो। इस प्रकार बाबा ने मुझे सेवार्थ बैंगलोर भेजा।

जगदम्बा सरस्वती का बैंगलोर में आगमन

एक बार माउंट आबू से, जगदम्बा सरस्वती का बैंगलोर आना हुआ। मैं सोचने लगी कि वो यज्ञ माता जिनको प्यार से सभी यज्ञ निवासी मम्मा कहते हैं, आ रही हैं तो उन्हें कहाँ बिठाऊँ, कैसे स्वागत करूँ? उस समय मुझे प्रेरणा मिली कि तुम ज्वेलरी स्ट्रीट में जाओ, उसी अनुसार जब मैं वहाँ पहुँची तो वहाँ एक मकान था, उस मकान मालिक को भी कुछ प्रेरणा मिली थी। जब मैं उससे मिली तो उसी प्रेरणा अनुसार उसने सारा घर दिखाया। वह भाई जगदम्बा का पुजारी था। जब उसे मालूम पड़ा कि चैतन्य जगदम्बा आ रही है तो खुशी-खुशी अपना घर भी दिया और गाड़ी भी दी। बाबा ने निमंत्रण पत्र का सैम्पल भी भेजा था, वह भी छपाना था। छपाई के काम के लिए भी बाबा ने टचिंग दी, कमर्शियल स्ट्रीट में एक प्रेस थी उसमें जाने के लिए। प्रेरणा मिलते ही मैं वहाँ गई। प्रेस का मालिक भी जगदम्बा का भक्त था। उसने खुशी-खुशी छापने की सेवा करके दी। इन सब खर्चों के लिए कोई-कोई निमित्त बनता गया। बाबा ने एक माली को भी प्रेरणा दी। वह फूलों का हार देकर गया। स्वागत के लिए सारी तैयारियाँ हो गई। मम्मा को स्टेशन से ले आये और स्वागत करते हुए ज्वेलरी स्ट्रीटमें ले गये। मम्मा का गला मालाओं से भर गया था। जगदम्बा सरस्वती की प्रकृति दासी हो गई थी। मकान मालिक ने मम्मा के सामने फल रखे और कहा, 'मैं आपका पुजारी हूँ, आप चेतन आई हो, स्वीकार करना। मेरी गाड़ी भी सेवा में लगाना और मेरी ग्लास की फैक्ट्री है, उसमें भी चरण रखना' लेकिन मम्मा को उस भाई का वह महल पसंद नहीं आया और मुझे कहा कि बाबा का जो सेवास्थान है, मुझे वहीं ले चलो। मम्मा को लेकर मैं सेवाकेन्द्र पर आई। सेवास्थान बहुत ही छोटा था। मुझे बहुत संकोच हुआ। अपनी चारपाई मम्मा को आराम करने के लिए दे दी। मम्मा ने कहा, बाबा ने कहा है, अगर बच्ची तकलीफ में हो तो उसे ले आना। यह सुनकर मैंने

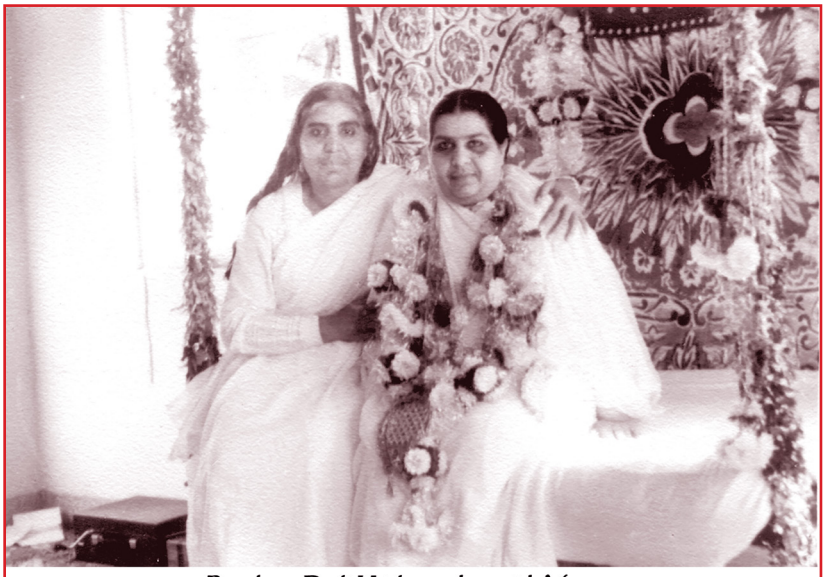

Banglore: Dadi Hridaypushpa with Mamma.

कहा, युद्ध के मैदान से कायर सिपाही भागते हैं, मैं नहीं भागूँगी, बाबा ने भेजा है, मरूँगी, जीऊँगी यहीं। एक बल, एक भरोसे पर रहूँगी। इस प्रकार कुछ दिन सेवा करके फिर मम्मा वापिस चली गई। मम्मा के इतने बढ़िया स्वागत का मुझे कभी सपने में भी ख्याल नहीं था। आज उसी स्थान पर बाबा का सेवाकेन्द्र चल रहा है जहाँ अनेक आत्मायें लाभ ले रही हैं और उस चौक (सर्किल) का नाम ही सरकार ने जगदम्बा सरस्वती सर्किल रख दिया है। पहले उस सर्किल का नाम क्वाड्रल सर्किल था।

बाबा ने अंग्रेजी में बुलवाया

एक बार सेवाकेन्द्र पर एक व्यक्तिआया। मुझसे मिला और कहा, आई वांट पीस ऑफ माइंड (I want peace of mind)। उस समय मुझे अंग्रेजी नहीं आती थी। आइ माना क्या, वांट माना क्या, पीस माना क्या, कुछ मालूम नहीं था। मैं एक सेकंड के लिए फंक हो गई फिर मन ही मन बाबा से कहा, बाबा, आपको ही सहयोग देना है, मेरी इज्जत की रक्षा आपको ही करनी है। इस आत्मा को जो चाहिये, वो आप ही मेरे मुख से कहलवाना। ऐसा संकल्प करके योग में बैठ गई। उसी घड़ी बाबा ने मेरे मुख के द्वारा अंग्रेजी में सारा ज्ञान समझाया। इस प्रकार उस भाई ने साप्ताहिक पाठ पूरा किया। वह भाई भी अंग्रेज भाई के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

जब बाबा अव्यक्त हुए...

ब्रह्मा बाबा के शरीर छोड़ने से एक वर्ष पहले मेरे लौकिक माता-पिता ने शरीर छोड़ा था। पिताजी ने यज्ञ में संपूर्ण समर्पण किया था इसलिए अंत में भी त्रिमूर्ति का साक्षात्कार करते हुए कहा, मैं जा रहा हूँ, मेरा बुढ़ापा खत्म हो रहा है, मुझे पुष्पक विमान में ले जाने के लिए त्रिमूर्ति आते हैं, इसलिए कोई रोना नहीं। यह बात 1968 की है, उसके बाद 1969 में बाबा अव्यक्त हो गये। जब बाबा अव्यक्त हुए तब मैं नेहरू नगर में थी, मन डाँवाँडोल था। चार-पाँच दिन से रोज अनुभव होता था जैसेकि बाबा बुला रहा है, बच्ची, मेरे पास आ जाओ। रात को दो बजे मैं उठकर बैठ जाती थी। साथी बहनें पूछती थी तो मैं कहती थी, मुझे बाबा बुला रहा है। ऐसा सुनने पर सब हँसी करते थे कि क्या आप शरीर छोड़ेंगी। उस दिन इतवार था, भट्ठी रखी थी, भोग लगाने बैठी तो काफी रोना आ रहा था, बहुत दुख हो रहा था, पता नहीं, योग भी नहीं लग रहा था। फिर बाबा के कमरे में जाकर खूब रोई। फिर महसूस हुआ कि अव्यक्त बापदादा आये, मेरे सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, बच्ची, रोती क्यों हो? आप जब पहली बार बाबा के पास आई थी और जैसी हँसी थी वैसे हँसकर दिखाओ। देखो बाबा आपके साथ है। अव्यक्त बापदादा की मीठी दृष्टि लेते-लेते वही हँसी मेरे चेहरे पर आ गई। फिर तो आबू से फोन द्वारा बाबा के अव्यक्त होने की सूचना मिली और साथ में यह भी कहा गया कि जो कुछ होता है, ड्रामानुसार होता है, ड्रामा में निश्चय रखो। फोन पर ही आबू आने के लिए कहा गया था सो मैं आ गई। फिर ड्रामा की भावी समझ अपने को संतुष्ट कर लिया।

एक दिन जब मैं क्लास करा रही थी तो एक बुजुर्ग व्यक्ति आया और बोला, मुझे भगवान ने भेजा है कुछ यादगार काम करने के लिए इसलिए मैं आया हूँ। देखने में तो वह ऐसा लग रहा था जैसे कोई भीख माँगने वाला हो। लेकिन, वो बुजुर्ग कुछ पैसा भी लाया था। उसी के हाथ से, यादगार बना हुआ वो 'शान्ति स्तंभ' माउंट आबू में आज भी खड़ा है।

बाबा द्वारा मैसूर के राजा की सेवा

भगवानुवाच सौ प्रतिशत सच होता है, इसका भी सुन्दर अनुभव हमने समय-समय पर किया। बैंगलोर के भाई-बहनों ने एक बार मैसूर के राजा को ईश्वरीय संदेश देने की योजना बनाई और मैं (मधुबन में) प्यारे बाबा से इस बारे में बातचीत करने गई। बाबा ने सेकंड में ही कहा, बच्चे, राजा तुम्हें नहीं मिलेगा।' परंतु भाई-बहनों के दो-तीन तार आ चुके थे, मुझे बुला रहे थे। बाबा ने साहित्य, टोली आदि देकर मुझे भेजा, परंतु वहाँ जाते ही अखबारों में खबर छपी कि राजा की माँ मर गई है, इसलिए राजा किसी से भी नहीं मिलेगा। इस प्रकार भगवानुवाच सच साबित हुआ। फिर बाबा ने कुछ समय बाद, राजा की सेवा का कार्यक्रम स्वयं बनाकर हमें दिया, उस अनुसार जाने पर राजा ने हमारा खूब सत्कार किया, बाबा द्वारा दिए झाड़, त्रिमूर्ति के चित्र हमने उसे सौगात में दिए, उसने भी गोल्डन तारों वाली शाल हमें सौगात में दी जो हमने बाबा को भेंट की। इस प्रकार बाबा त्रिकालदर्शी बन सेवा करवाता था।

******

डॉ. ब्रह्माकुमार नरसय्या, ज्ञानसरोवर, आबू पर्वत दादी हृदयपुष्पा के बारे में इस प्रकार बताते हैं

बाबा से दिल-जान से प्यार

दादी हृदयपुष्पा जी त्याग, तपस्या एवं गुणों की चैतन्य मूर्ति थीं। वे बाबा को दिल-जान से प्यार करती थीं। उनके हर वाक्य में बाबा-बाबा शब्द रहता था। बाबा के महावाक्य मुरली पर उनका अथाह प्रेम और श्रद्धा रहती थी। रोज़ वे कम से कम तीन बार मुरली पढ़ा करती थीं। कोई भी आये, चाहे छोटा या बड़ा, वे ख़ुद मुरली पढ़कर सुनाती थीं। जब वे योग में बैठती थीं तब सिर्फ अपनी देह को ही नहीं सारी दुनिया को भूलकर तन्मय होकर बाबा की लगन में मगन रहती थीं।

वे भाषा से नहीं, योग-शक्ति से समझाती थी

वे कर्नाटक की राजधानी बेंगलूर में रहती थीं लेकिन उनको कन्नड भाषा नहीं आती थी। वे भाषा से नहीं, अनुभूति से, योग की शक्ति से जिज्ञासुओं को समझाती थीं, अनुभव कराती थीं। वे सात्विक अन्न, पवित्रता, योग तथा मुरली को प्रथम स्थान देती थीं।

वे कभी ख़ाली नहीं बैठती थीं। हमेशा किसी न किसी सेवा में व्यस्त रहती थीं। प्रतिदिन सुबह की मुरली वे ही सुनाती थीं। मुरली के बाद फ्री होतीं तो सबके साथ सब्जी काटने बैठ जाती थीं। अगर कपड़े सिलाई करने होते तो कपड़े कटिंग करके देती थीं।

हर संकल्प सिद्ध

दादी हृदयपुष्पा जी की एक प्रबल इच्छा थी कि बेंगलूर नगर में एक राजयोग भवन बनायें और उसके अन्दर एक बड़ा शिवलिंग रहे और उस शिवलिंग के अन्दर आध्यात्मिक संग्रहालय (म्युजियम) रहे। हमने देखा कि दादी जी कोई भी संकल्प करती थीं वो सिद्ध हो जाता था या वे उसे सिद्ध कर लेती थीं। योग भवन बनाते समय उस जमीन तक जाने के लिए, चलने के लिए ठीक रास्ता ही नहीं था लेकिन दादी जी वहीं रहकर कनस्ट्रक्शन का काम कराती थीं। उन दिनों शिवलिंग रूप का कोई भवन हमारे विद्यालय का नहीं था। क्लास में आने वालों ने तथा अन्य स्थानों पर रहने वाले कई बी.के. भाई-बहनों ने इसका विरोध किया कि यह भक्तिमार्ग है लेकिन शिवलिंग का यह म्यूजियम कैसा होना चाहिए, उसका निर्माण कैसे कराना चाहिये यह सब बाबा ने दादी जी को साक्षात्कार में दिखाया। दादी जी ने उसी अनुसार शिवलिंग के रूप का म्युजियम उस राजयोग भवन में बनवाया।

साधन बाबा के कार्य के लिए हैं

शिवलिंग बनाते समय पैसों की कमी पड़ गयी तो उनके पास उस समय दो कारें थीं। दोनों को उन्होंने बेच दिया। उस पैसे से रुके हुए कार्य को आगे बढ़ाया। उस समय मैंने दादी जी से पूछा, दादी, आपने दोनों कारें बेच दीं, अब आप कैसे आना-जाना करेंगी। वी वी पुरम् सेन्टर से राजयोग भवन करीब 16 किमी दूर है। तब उन्होंने कहा कि बाबा है, किसी न किसी कार वाले को भेज देगा, वो आकर ले जायेंगे, जो साधन हमारे पास हैं वो बाबा के कार्य के लिए हैं, न कि पर्सनल सेवा के लिए। इस प्रकार वे हमेशा बाबा की सेवा को ही प्रथम स्थान देती थीं, बाद में अपने को। फिर तो रोज़ कोई न कोई भाई आकर उनको वहाँ छोड़ता था और ले आता था।

पूरे दक्षिण भारत में ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग का बीज जिन्होंने बोया। उनके तपोबल, मनोबल एवं धारणा के बल के फलस्वरूप आज हज़ारों ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पूरे दक्षिण भारत (कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडू और केरल) में सेवा कर रहे हैं।

धीरज और योगबल से सफलता

सेवाक्षेत्र में कोई भी विघ्न आये या परिस्थिति आये, वे कभी घबराती या चिन्तित नहीं होती थी। उन्होंने धीरज और योगबल से काम लिया और काम किया। एक बार मधुबन से दो बसें भरके भाई बेंगलूर आये थे टूअर पर। उन दिनों राज्य भर में मिट्टी का तेल कन्ट्रोल में था। किसी भी दुकान में नहीं मिलता था। क्लास के सब भाई-बहनें चिन्ता करने लगे कि क्या करें, सबके लिए खाना कैसे बनायें। दादी जी जाकर बाबा के कमरे में योग में बैठ गईं। भाई-बहनें आपस में मिलकर अपने-अपने घरों से मिट्टी का तेल लेकर आये। सबका इकट्ठा किया हुआ तेल इतना हो गया कि सब कार्य व्यवस्थित रूप से सम्पन्न हुए। उन्होंने हम सबको यह पाठ पढ़ाया कि कोई भी समस्या आती है या कोई भी कार्य करना है तो बाबा को साथ रखो और बाबा की याद में करो तब बाबा उस कार्य को सफल करने के लिए कोई न कोई हल निकाल देता है। बाबा पर उनका निश्चय, उनका भरोसा देखने लायक होता था।

मुख से बाबा के महावाक्य और चरित्र ही निकलते थे

हमने देखा कि सदा उनके मुख द्वारा बाबा के महावाक्य और साकार बाबा के चरित्र ही निकलते थे। यज्ञ इतिहास सुनाते-सुनाते वे खो जाती थीं। उनका अनुभव सुनते-सुनते हमें भी ऐसा लगता था कि हम भी कराची में साकार बाबा के सम्मुख बैठे हुए हैं। जब माँ सरस्वती बेंगलूर आयी थीं, उन दिनों का अनुभव जब वे सुनाती थीं, उन्हें सुनते-सुनते हम भी सुधबुध भूल जाते थे, खुशी में तन-मन डोलने लगते थे।

शुरू-शुरू में क्लास में आने वाले कोई भाई-बहनें पाँच रुपये की भी सेवा करते थे तो तुरन्त दादी जी उन पैसों की डाक टिकट मँगवाकर मधुबन भेज देती थीं ताकि मुरली भेजने के काम में आयें।

पुलिस इन्स्पेक्टर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया

एक बार बेंगलूर में कोई विघ्न आया। पुलिस इंस्पेक्टर दादी जी से इंक्वायरी करने सेन्टर पर आया। उस समय मैं भी वहीं था। वो इंस्पेक्टर आकर थोड़ी ऊँची आवाज़ में ही पूछने लगा कि कहाँ हैं आपकी दादी जी? उस समय दादी जी अपने कमरे में योग कर रही थीं। वह वहीं गया। दादी जी को देखते ही उसको क्या साक्षात्कार हुआ ,पता नहीं, वह दादी जी को दंडवत् प्रणाम कर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। थोड़े समय के बाद बिना कुछ पूछे वहाँ से चुपचाप चल पड़ा लेकिन दादी जी ने उसको बुलाकर टोली (प्रसाद) देकर भेजा।

रक्षाबन्धन के त्यौहार पर दादी जी शाम को राखी बाँधने के लिए बैठती थी और रात 10 बजे तक लगातार योगयुक्त होकर सबको दृष्टि देते हुए राखी बाँधती थीं। हमें ऐसा अनुभव होता था कि राखी बाँधने के समय बापदादा भी वहाँ पर उपस्थित हैं। पूरा वायुमंडल अव्यक्त और योगयुक्त रहता था।

उनसे देवी का साक्षात्कार

दादी जी के सामने कोई भी आये, चाहे वो ज्ञानी हो या भक्त, सब उनसे वरदान, प्रेरणा लेकर जाते थे। कई लोगों को तो दादी जी को देखकर देवी का साक्षात्कार होता था।

इस प्रकार, दादी हृदयपुष्पा जी एक ऐसी महान् आत्मा थीं जिनमें बाबा के प्रति अटूट प्रेम और सम्पूर्ण निश्चय था। वे सत्यता, आज्ञाकारिता, ईमानदारी, वफादारी, फरमानबरदारी की सजीव मूरत थीं। दादी जी मुरली की दीवानी थीं। वे सदैव योगयुक्त रहती थीं। देखने वालों को ऐसा लगता था की वे परमात्मा की प्रेम में लवलीन हैं। वे एक महान् योगिन व तपस्विनी थीं।

******* OM SHANTI *******